शिक्षा में नई दिशा

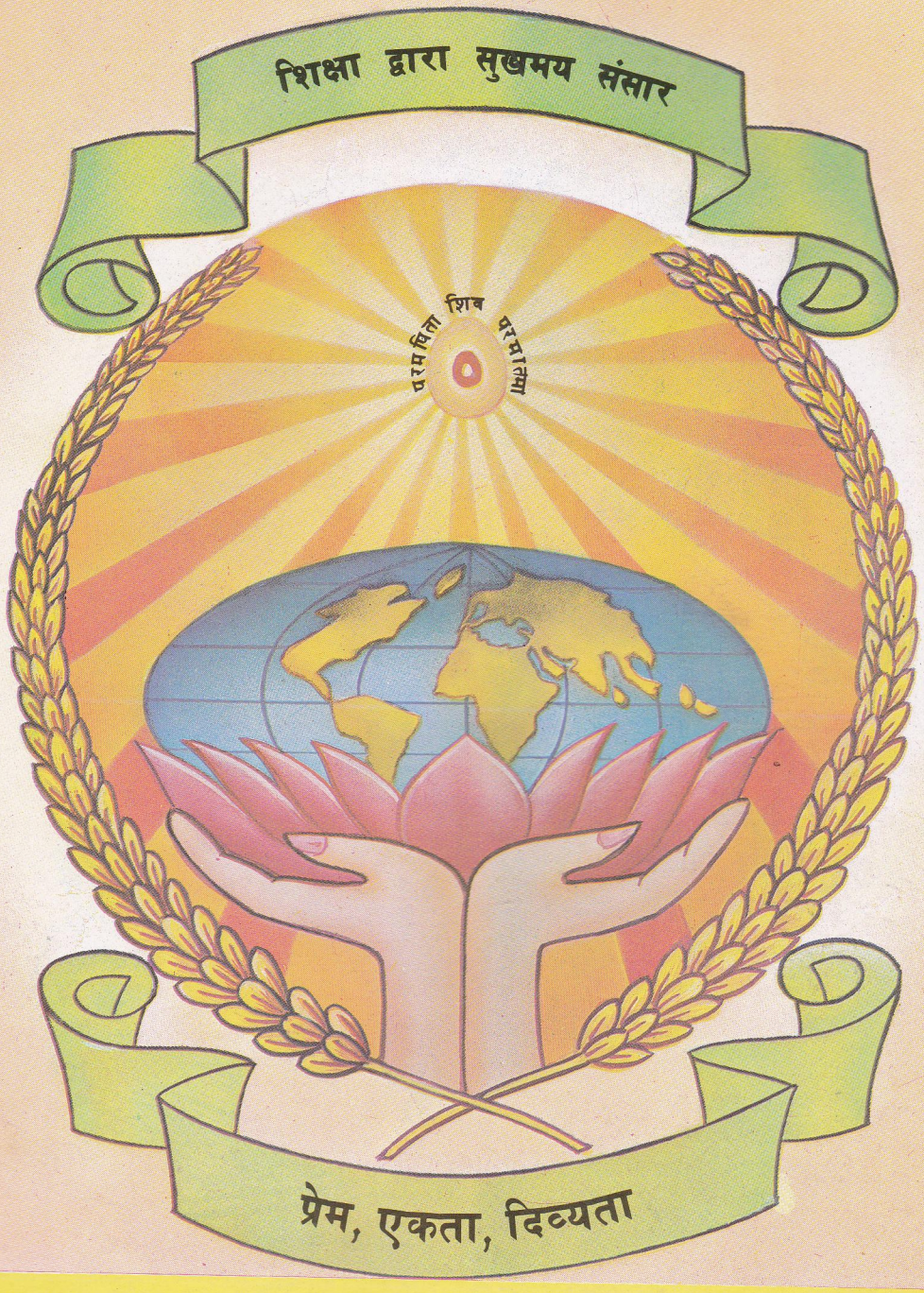

शिक्षा में नई दिशा

मुख्य उद्देश्य

1. शैक्षणिक क्षेत्र में आध्यात्मिक ज्ञान को सरल परन्तु विवेक-सम्मत और धारणायुक्त ढंग से समझाना।
2. शिक्षा द्वारा मानवीय मूल्यों का पुनरुत्थान करना।
3. विद्यार्थियों का चरित्र-निर्माण करना।
4. योग अभ्यास द्वारा मानसिक शक्तियों को बढ़ाना।
5. मनन शक्ति, चिन्तन शक्ति, एकाग्रता शक्ति आदि शक्तियों का विकास करना।
6. सुखमय संसार एवं श्रेष्ठ समाज की रचना के लिए ईश्वरीय ज्ञान को जीवन में धारण करना।
7. एक प्रगतिशील एवं उत्तरदायी नागरिक बनने के लिए विद्यार्थियों को प्रेरित करना।
8. विचार और व्यवहार को उदार बनाना। धर्म, भाषा, जाति या लिंग पर आधारित भेद तथा पूर्वाग्रह से ऊपर उठाना।
9. विद्यार्थियों में आत्म-सम्मान की भावना जगाना, उनके आंतरिक गुणों का विकास करना तथा नैतिक मूल्यों के साथ-साथ उन्हें आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करना।
10. विश्व बंधुत्व की भावना जगाना।
11. वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करना।

अमृत–सूची

- भूमिका ---------- (i)
- शिक्षा संबंधी कुछ नीति-वचन ---------- (ii)
- शिक्षा का महत्व ईश्वरीय महावाक्यों पर आधारित - (iii)
- (Education) शिक्षा शब्द का दिव्य अर्थ ---------- 4
- शिक्षा का ध्येय ---------- 7
- आज की शिक्षा प्रणाली ---- 8
- शिक्षा में योग की आवश्यकता ---------- 11
- नई शिक्षा नीति में योग का स्थान ---------- 12
- राजयोग का अर्थ ---------- 14
- अध्ययन की नई दिशा ---- 17
- सर्वोच्च शिक्षक ---------- 18
- मैं हूँ शिक्षा ---------- 21
- विद्यार्थी जीवन में समय का महत्व ---------- 23
- एक अनोखा ईश्वरीय विश्वविद्यालय ---------- 24

प्रकाशक :
प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय का राजयोग शिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान

भूमिका

समाज केवल भौतिक वस्तुओं का संग्रहमात्र नहीं है। विज्ञान की लक्ष्यविहीन दौड़ में हाथ लगी कुछ भौतिक उपलब्धियां ही श्रेष्ठ समाज का मापदण्ड नहीं सकती हैं। समाज अमूर्त होता है और यह प्रेम, सद्भावना, आपसी भ्रातृत्व, नैतिकता एवं मानवीय मूल्यों के सहारे संचालित होता है। एक प्रगतिशील एवं श्रेष्ठ"समाज के सन्दर्भ इन्हीं मूल्यों से परिभाषित होते हैं। आज इन मूल्यों का घोर अभाव नहीं, भयंकर अकाल हो गया है। शैक्षणिक जगत् जहाँ से समाज के आधारभूत ढाँचे का निर्माण होता है, इन मूल्यों के अभाव से अछूता नहीं रहा है। आज विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के बजाय उग्र-प्रदर्शन, राजनीति, हड़ताल, तोड़-फोड़, नशीली दवाओं के सेवन, मनोरंजन के साधनों तथा बाह्यमुखता में लाने वाली बातों में ज्यादा रुचि लेते हैं और अध्यापक भी रुचिपूर्वक शिक्षण कार्य नहीं करते हैं। अध्यापक और शिष्य के आपसी सम्बन्धों में काफी परिवर्तन आया है, इसे तो प्राय: सभी स्वीकार करते ही हैं।

शिक्षा को सुधारने के लिए अथवा विद्यार्थियों के श्रेष्ठ मार्ग-दर्शन एवं चरित्र-निर्माण के नाम पर समय-समय पर शिक्षा आयोग गठित किये जाते रहे हैं। नया संविधान बनने के बाद भी 'धर्म-निरपेक्षता' की बात उठाकर कई लोग नैतिक एवं आध्यात्मिक शिक्षा को पाठ्यक्रम में स्थान देने का विरोध करते थे। उन्होंने वह भी नहीं सोचा कि 'धार्मिक शिक्षा' और 'आध्यात्मिक शिक्षा' एक ही शिक्षा के दो नाम नहीं है। परिणामत: शैक्षिक स्तर में गिरावट जारी रही। कारण कि इन समस्याओं का समाधान बाहर खोजा जाता है, जबकि समस्या की जड़ अन्दर विद्यमान है। बिमारी आँख में और आपरेशन पैर का, इससे तो बिमारी सदा दोगुना बढ़ेगी ही। सरकार ने जो 'नई शिक्षा नीति'"घोषित की है उसमें नैतिक मूल्यों की भी बात कही गई है। इससे तो स्पष्ट ही है कि सरकार भी इसकी आवश्यकता को अब मानती है। आज प्राय: सभी लोग इसकी आवश्यकता को स्वीकार करते ही हैं।

उपर्युक्त बातों की सामने रखते हुए, चित्रों के माध्यम से विद्यार्थियों का ध्यान नैतिक मूल्यों एवं आध्यात्मिक ज्ञान की ओर खिचवाया गया है। प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय में हर आयुवर्ग के व्यक्ति अपने-अपने स्तर के अनुसार यह शिक्षा नियमित रूप से नित्य प्राप्त करते ही हैं। यहाँ स्कूलों और कालेजों में पढ़ने वाले विद्यार्थी भी आकर नैतिक एवं आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करते तथा सहज राजयोग सीखते हैं। इस ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा मानवीय मूल्यों की पुर्नस्थापना के लिए 'राजयोग शिक्षा एवं अनुसंधान संस्थान'"की स्थापना हुई है। उसी के तत्वाधान में कुछ शिक्षकों तथा शिक्षा-विदों ने मिलकर यह प्रयास किया है। आशा है यह चित्र-प्रदर्शनी विद्यार्थियों का चरित्र-पथ-प्रदर्शन कर, एक ऐसे समाज की पुर्नस्थापना की क्रान्तिदूत बनेगी, जिसमें एक दूसरे के प्रति सम्मान, प्रेम, सहयोग की भावना इत्यादि मानवीय मूल्य होंगे। शिक्षकों एवं अभिभावकों को भी एक ऐसा साधन मिल जाएगा जिससे वे बच्चों को ऐसी शिक्षा दे सकेंगे।

शिक्षा सम्बन्धी कुछ नीति-वचन

- सा विद्या या विमुक्तये।
- शिक्षा मानव को आत्म-विश्वासी तथा नि:स्वार्थी बनाती है।
- जीवन के अंधकार में प्रकाश की किरणें फैलावे वह है शिक्षा। *-सुभाषित*
- मानव की सम्पूर्णता का प्रकटीकरण - यही शिक्षा है। *-ए.जी.वेल्स*
- प्रत्येक मनुष्य के मस्तिष्क में अदृश्य रूप में विद्यमान संसार के सर्वमान्य विचारों को लाना-इसका ही नाम शिक्षा है। *-सोक्रेटिस*
- शिक्षा अर्थात् जो परम सत्य की खोज में मन का सहायक हो, जो स्वयं को काल के बंधन से मुक्त करे और द्रव्य का ही नहीं, आंतरिक प्रकाश का भी, शक्ति का ही नहीं, प्रेम का खजाना दे तथा सत्य को वास्तविक स्वरूप में प्रकट करे। *–टैगोर*
- शिक्षा अर्थात् बुद्धि शक्ति का अनुशासन। *–जहोन लॉक*
- बालक और मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा में जो कुछ भी श्रेष्ठ है उसे बाहर निकालना - इसको ही मैं शिक्षा कहता हूँ। *-गांधी जी*
- मानव को चरित्रवान और जगत् के उपयोगी बनावे - उसको ही शिक्षा कहा जायेगा। *-याज्ञवल्क्य*
- शिक्षा सत्य का हथियार है, शिक्षा अर्थात् मुक्ति, आत्मदर्शन, स्वयं प्रेरणा, नित्य नया सृजन, साहस। *-विनोबा भावे*
- अपनी शक्तियों के विकास और उन्नति के लिए जागृतिपूर्वक किये गये किसी भी प्रयास को शिक्षा कहा जायेगा। -जे.एस.मेकेन्जी
- शिक्षा विकास का क्रम है, जिससे व्यक्ति स्वयं को धीरे-धीरे विभिन्न प्रकार के भौतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक वातावरण के अनुकूल बना लेता है, वास्तव में जीवन ही मानव को शिक्षित करता है। -टी.रोमेंट
- शिक्षा के प्रति सर्वांगीण विकास का दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। -डा.राधा कृष्णन्
- शिक्षा अर्थात् शिष्टाचार की प्रशिक्षा तथा देश व प्रकृति के प्रति प्रेम। -कौटिल्य
- तत्वज्ञान की सहायता के बिना शिक्षा की प्रक्रिया सच्चे मार्ग पर प्रगति नहीं कर सकती । -जेस्टाईल

शिक्षा का महत्व

✪ वास्तविक शिक्षा वह है जो इन प्रश्नों पर प्रकाश डाले कि मैं कौन हूं, कहाँ से आया हूं, मेरे जीवन का लक्ष्य क्या है! संसार के अन्य लोगों के साथ तथा सृष्टि के कर्त्ता के साथ मेरा सम्बन्ध क्या है और संसार की जो वर्तमान स्थिति है, वह ऐसी क्यों है और इस स्थिति के आधार पर इसका भविष्य क्या होगा? ऐसी शिक्षा से मनुष्य का व्यवहार श्रेष्ठ होता है। चरित्र महान् बनता है और उसके संस्कारों का नव-निर्माण होता है। शिक्षा मनुष्य को सत्कर्म के लिए प्रेरित, उत्साहित, उद्यत और तत्पर करती है।

✪ वास्तविक शिक्षा को प्राप्त करने वाला व्यक्ति केवल अपने लिए ही नहीं जीता, बल्कि वह करुणाशील और परोपकारी होता है।

✪ सही शिक्षा मनुष्य को जाति-पांति, शारीरिक आकृति और रंग, नस्ल और देश भेद पर आधारित, संकुचित विचारों, बन्धनों तथा घृणा-द्वेष आदि से मुक्त कर स्वतंत्र, स्वच्छ और सुशील बनाती है।

✪ शिक्षा केवल पुस्तकों से प्राप्त नहीं होती, माता-पिता, अड़ोसी-पड़ोसी और वातावरण का व्यक्ति के चिंतन पर स्थाई प्रभाव पड़ता है, व्यक्ति को शिक्षित करने में उपदेशक के उपदेश का या शिक्षक की केवल मौखिक शिक्षाओं का इतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना कि उपदेशक अथवा शिक्षक के व्यवहारिक जीवन और आचार का प्रभाव पड़ता है।

✪ शिक्षा को हम तीसरा नेत्र कह सकते हैं जिसके बिना मनुष्य को सत्य का बोध नहीं होता, बल्कि केवल ऊपरी, बाह्य अथवा क्षणिक ज्ञान होता है।

✪ संसार का आदि और परम शिक्षक सद्गुरु जो शुद्ध सत्य का, त्रैकालिक सत्य का, सर्वभौम सत्य का और कल्याणकारी तथा सुन्दर सत्य का ज्ञान देता है, वह एक परमात्मा ही है।

- ईश्वरीय महावाक्यों पर आधारित

(Education) शिक्षा शब्द का दिव्य अर्थ

शिक्षा-सम्बन्धी नीति वचनों में तथा ईश्वरीय वाणी में शिक्षा और जीवन के सम्बन्ध में जो व्यवहारिक जीवन-सत्य व्यक्त हुआ है, वह अंग्रेजी भाषा के एज्युकेशन (Education) शिक्षा शब्द के नौ अक्षरों द्वारा भी अभिव्यक्त किया जा सकता है। इस दृष्टि से `Education' का सूक्ष्मार्थ या दिव्यार्थ इस प्रकार हो सकता है:-

E-Etiquette (शिष्टाचार):- सुशिक्षित मानव नम्रता, मधुरता आदि गुणों से युक्त होता है। वह अपने मात-पिता तथा शिक्षकों से विनम्रता पूर्ण और अपने से छोटों के प्रति भी सदा शिष्टाचार से आचरण करता है।

D-Discipline (अनुशासन) :- विनम्रता के साथ शिक्षा अनुशासन से ही अलंकृत होती है। सैनिक एवं सेनापति का अनुशासन इसका प्रतीक है। सही शिक्षा द्वारा बाह्य अनुशासन के साथ-साथ आन्तरिक अनुशासन, अर्थात् मन-बुद्धि-संस्कारों का अनुशासन या वृत्ति-वाणी और कर्म का अनुशासन भी होता है। शिक्षा सच्चे अर्थों में किसी को भी अनुशासित 'विद्यार्थी' बनाती है।

U-Universal Brotherhood (विश्व-बन्धुत्व) :-

विश्व में भिन्न-भिन्न देश, लोग तथा धर्म हैं। परन्तु सभी एक परमपिता परमात्मा की संतान हैं और आपस में भाई-भाई हैं। देश और धर्मों से भी ऊपर उठकर विश्व-बंधुत्व की भावना सच्ची शिक्षा में स्वत: ही समाहित हो जाती है।

C-Creativity (रचनात्मकता/सृजनात्मकता) :- जिस प्रकार एक कलाकार व शिल्पी पत्थर में अपनी भावना भरकर उसे मूर्ति बना देता है, उसे जीवन्त करने का प्रयास करता है, उसी प्रकार शिक्षा प्राप्त मानव में भी वेस्ट (Waste) से बैस्ट (Best) अर्थात् निकृष्ट से श्रेष्ठ बनाने की सृजनात्मकता का गुण आता है। इस प्रकार वह ब्रह्मा की तरह एक निर्माता बन जाता है।

A-Awareness (जागृति) :- सच्ची शिक्षा आत्मा रूपी दीपक को जगाती है अथवा उसका तीसरा नेत्र खोलती है, यही वास्तविक जागृति है। जैसे मनुष्य को जीवन की बाल, युवा, प्रौढ़ तथा वृद्धा–इन चारों अवस्थाओं की जानकारी होती है, उसी तरह उसे सृष्टि के आदि, मध्य और अन्त का ज्ञान होने पर वह जानता है कि मृत्यु भी निश्चित है। अत: वह सृष्टि रंगमंच पर अपने को एक अभिनेता समझकर अपने कर्मों के प्रति जागृत रहता है।

T-Transformation (रूपान्तरण) :- शिक्षा से मानव का मनोपरिवर्तन अथवा संस्कार-परिवर्तन हो जाता है। वह एक उत्तरदायी नागरिक बन जाता है। शिक्षा मानव की आसुरी वृत्तियों का दैवी वृत्तियों में रूपान्तरण करती है।

I-Integrity (एकात्मकता) :- सूर्यमुखी फूल का मुख सदैव सूर्य की ओर होता है। वह अपने मूल से भी जुड़ा रहता है और सूर्याभिमुख हो जाता है। उसी प्रकार शरीर में रहते हुये मनुष्य की बुद्धि परमपिता परमात्मा की ओर ही जानी चाहिये अर्थात् उसे सदा परमात्मा की स्मृति रहनी चाहिये। शिक्षित मनुष्य सूर्यमुखी की तरह होता है। वह स्वयं खिलकर सुन्दर समाज का निर्माण करता है।

O-Optimist (आशावादी) :- सुशिक्षित मानव सदैव आशावादी होता है। आधा गिलास पानी व दूध पाकर भी वह धन्यता अनुभव करते हुये कहता है- वाह, आधा गिलास भरा हुआ है। वह आधा भरा हुआ देखता है, आधा खाली नहीं। दीवार तोड़ने वाला व्यक्ति हथौड़े मारता हुआ इसी आशावाद से श्रम करता कि अभी दीवार टूटी कि टूटी। वह किसी भी प्रकार की कठिन परिस्थितियों में निराशा या हताशा का अनुभव नहीं करता।

N-Nobility (सौजन्य-सज्जनता) :- सद्विद्या से मानव में सज्जनता का गुण विकसित होता है। वह असहाय लोगों का सहायक अथवा अन्धों की लाठी बन सच्चा सेवाधारी बनता है।

शिक्षा का ध्येय

शिक्षा का वास्तविक अर्थ समझ लेने पर उसका ध्येय भी स्पष्ट हो जाता है। कोई भी प्रवृत्ति लक्ष्यविहीन नहीं हो सकती, इसी प्रकार शिक्षा के भी कई विशेष ध्येय हैं। शिक्षा के ध्येय को भी हम कई दृष्टियों से निर्धारित कर सकते हैं। चित्र के बाँयी ओर के प्रथम भाग में एक आदमी दो लाठियों के बीच बंधी रस्सी पर चल रहा है। उधर कुम्हार मिट्टी के कलात्मक बर्तन को आकार दे रहा है। दोनों कार्यकुशलता की अभिव्यक्ति द्वारा आनन्द अनुभव कर रहे हैं और उन्हें धन की प्राप्ति होगी ही। शिक्षा का भी एक ध्येय है-'कार्यकुशलता'।

उपर्युक्त चित्र के दाँयी ओर कुछ पदचिन्ह अन्धकार से प्रकाश की ओर जाते दिखाए गये हैं। ऋषियों ने गाया है- ''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' अर्थात् अज्ञान रूपी अन्धकार से ज्योति या प्रकाश तत्व की ओर, असत्य से सत्य की ओर अथवा बन्धनों से मुक्ति की ओर ले जाये वही सच्चा ज्ञान है। ज्ञान से ही विचार शक्ति, निर्णय शक्ति, परख शक्ति आदि जीवनोपयोगी शक्तियों का विकास होता है। शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति को ऐसा ज्ञान प्राप्त कराना भी है जिससे उसके जीवन में प्रकाश और निर्णय शक्ति आदि शक्तियों की प्राप्ति हो।

चित्र के तीसरे भाग में दिखाया गया है कि शिक्षा का एक ध्येय व्यवसायिक क्षमता प्राप्त करना भी है। व्यवसायिक व्यक्ति को अपने जीवन-निर्वाह के लिये धन की प्राप्ति और उसके लिये व्यवसायिक ज्ञान भी जरूरी है। अत: शिक्षा का एक ध्येय इंजीनियर, डाक्टर, वकील तथा अन्य व्यवसाय या कार्य के योग्य बनाना है।

चित्र के बाँयी ओर नीचे के भाग में दिखाया गया है कि शिक्षा हेतु सुसंवादिता एवं सामंजस्य स्थापित करना भी है। जब सभी वाद्य सितार, तबला, हारमोनियम, बांसुरी आदि का परस्पर ताल और लय सुमेल वा सामंजस्य पूर्ण होता है तो वे मधुर संगीत की रचना करते हैं। उसी प्रकार जब एक व्यक्ति और दूसरे व्यक्ति के बीच परस्पर स्वभाव एवं संस्कारों की सुसंवादिता और सामंजस्य हो तभी उनके जीवन में मधुरता आती है, तभी जीवन एक संगीत बन जाता है। परिवार, समाज एवं देश के जन-जीवन में भी जाति, धर्म और भाषा की भिन्नता होते हुए भी सामंजस्य और तालमेल की भावना एक मधुर एकता एवं मानवता का अभिगुंजन कर देती है।

पूर्णता की प्राप्ति जीवन का प्रधान ध्येय है। शिक्षा का यह ध्येय कमल पुष्प के बीच पूर्ण मानवता के प्रतीक देवी-देवता दिखाकर व्यक्त किया गया है। पूर्ण मानव किसे कहेंगे? उसे, जिसमें दिव्य गुणों का सुवास हो। वास्तविक शिक्षा वह जो मनुष्य को देवता, नर को श्री नारायण और नारी को श्री लक्ष्मी बना देती है, अर्थात् तिरोहित दिव्यता को उभारती है।

शिक्षा एक ऐसा बीज है जिससे जीवन एक फलदार वृक्ष बन जाता है। चित्र के अन्तिम भाग में यही दर्शाया गया है। किसी भी फलदायी वृक्ष की यथार्थता या सफलता भी तब मानी जाती है जब वह फल-फूलों से लद जाता है। उसी प्रकार मानव का जीवन भी एक वृक्ष के समान है। जब तक उसके जीवन के प्रत्येक व्यवहार में सेवा, परोपकार, धैर्य, त्याग, उदारता, पवित्रता जैसे दिव्य गुण रूपी फल नहीं लगते तब तक उसके जीवन को पूर्ण जीवन या दिव्य जीवन नहीं कह सकते हैं। मानव जीवन में भी दिव्यता एवं पूर्णता की प्राप्ति कराना-शिक्षा का सही उद्देश्य है। ऐसी प्राप्ति वर्तमान शिक्षा प्रणाली से नहीं हो रही है। अत: आज समय की मांग है–हमें नई दिशा, नई राह का अन्वेषण करना है ताकि आज का मानव पूर्ण मानव, दिव्य मानव बने।

आज की शिक्षा प्रणाली

आज विद्यार्थियों को अनेक विषय पढ़ाये जाते हैं। नि:सन्देह इन सभी की अपनी-अपनी उपयोगिता है परन्तु समाज को भौतिक पदार्थों से सम्पन्न बनाने के अतिरिक्त, इसे एक सुसंस्कृत, सद्व्यवहार-युक्त और सशक्त समाज बनाने की भी आवश्यकता है। इस उद्देश्य से इसे थोड़ा सा आध्यात्मिक पुट देने की भी आवश्यकता है। उदाहरण के तौर पर आज विद्यार्थियों को विश्व का भौगोलिक ज्ञान तो दिया जाता है इसके अतिरिक्त तारामंडल, नक्षत्रमंडल का भी थोड़ा परिचय दिया जाता है परन्तु तीनों लोकों का ज्ञान नहीं कराया जाता। शारीरिक दृष्टि से हमारा देश कौन सा है, उसका परिचय दिया जाता है। परन्तु शरीर से भिन्न जो चेतन-सत्ता या आत्मा है, वह किस देश से भूमंडल पर आई है, उसका ज्ञान ही नही दिया जाता। यह ज्ञान नहीं दिया जाता कि हम सभी आत्मायें परमधाम से आई हैं और परस्पर भाई-भाई हैं।

आज हर देश की सरकार देश की रक्षा के लिये अपार धन व्यय करती है। स्कूलों, कालेजों में भी देश की रक्षा का ज्ञान पाठ्यक्रमों तथा विभिन्न स्वैच्छिक प्रवृत्तियों द्वारा दिया जाता है। एन.सी.सी., एन.एस.एस. आदि द्वारा भी देश की रक्षा एवं स्वरक्षा की तालीम दी जाती है। यह तो आवश्यक ही है, पर साथ-साथ शरीर की चेतन शक्ति आत्मा काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, आलस्य आदि मनोविकारों के प्रहार से अपनी रक्षा कैसे करे, यह ज्ञान या तो नहीं दिया जाता और या अत्यल्प दिया जाता है। इन दुश्मनों ने गोलाबारी प्रारम्भ कर दी है, उनसे रक्षा कैसे हो, इसकी भी तालीम अथवा ज्ञान देना आज अनिवार्य है क्योंकि इन्हीं के आक्रमण से आज सारा संसार त्रस्त एवं दु:खी है।

शरीर विज्ञान तथा आरोग्य विज्ञान भी आज की शिक्षा प्रणाली में पढ़ाया जाता है जो कि लाभप्रद है। परन्तु शरीर के अंगों के साथ-साथ आत्मा की शक्तियों का तथा उसके आरोग्य का ज्ञान भी दिया जाय तो बहुत भला होगा। आज मानव की आत्मा अस्वस्थ है, उसके स्वास्थ्य के विधि-विधान को जानना भी आवश्यक है। मन, बुद्धि, संस्कार आत्मा की ही शक्तियां हैं, इनके द्वारा ही आत्मा मन के द्वारा सोचने, बुद्धि के द्वारा निर्णय करने एवं अन्य शारीरिक कर्मेन्द्रियों के द्वारा कार्य करती है। आत्मा के ये तीनों अंग अपवित्र अथवा बीमार होते जा रहे हैं। आत्मा के स्वास्थ्य पर शरीर का स्वास्थ्य भी बहुत हद तक निर्भर है। तो शरीर और आत्मा दोनों के लिये शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक ज्ञान ही संपूर्ण ज्ञान है। यह ज्ञान होने से जीवन सुख, शान्ति और आनन्द से आलोकित हो जाता है।

आज शिक्षा मनुष्य को मात्र धन-प्राप्ति के योग्य ही बनाती है। इस द्वारा मनुष्य रोज़ी, रोटी और मकान की आवश्यकता को पूर्ण करता है। फिर धीरे-धीरे वह अपनी सुख-सुविधा की वस्तुएं, बंगला, मोटर आदि भी जुटाता है। जीवन में इनका भी अपना महत्व है। परन्तु जीवन में ये स्थूल सुख-साधन और धन होने पर भी यदि शान्ति और सन्तोष धन न हो तो सारी बाह्य प्रगति का क्या परिणाम? लोभी मनुष्य कभी तृप्त नहीं होता और कामनाएं पूर्ण नहीं होती। अत: सन्तोष धन के बिना शेष धन होने से भी जीवन में सन्तुष्टता नहीं आ सकती है। यह सन्तोष ईश्वरीय ज्ञान से ही सम्भव है। इसी को सच्चा ज्ञानधन कहा जाता है, जो एक जन्म का नहीं, अनेक जन्मों का साथी बन जाता है।

आज की शिक्षा प्रणाली में हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि तथा जगत् के सभी धर्मों का परिचय कराया जाता है। परस्पर जानकारी के लिए यह भी जरूरी है पर साथ-साथ स्वधर्म अर्थात् स्वयं आत्मा के धर्म-प्रेम, शान्ति, पवित्रता, सुख, आनन्द आदि का भी सम्पूर्ण ज्ञान नितान्त आवश्यक है। इसके अभाव में शिक्षा अधूरी रह जाती है।

आज की शिक्षा प्रणाली में यदि इन सूक्ष्म बातों को समावेशित कर दिया जाये अर्थात् नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों को भी एक विषय के रूप में स्थान दिया जाये तो व्यक्ति-परिवर्तन द्वारा विश्व-परिवर्तन बड़ा आसान हो जाएगा। यही वास्तविक पूर्ण शिक्षा है।

शिक्षा में योग की आवश्यकता

बालक का विकास उसकी जन्मजात प्रवृत्तियों, घर और विद्यालय के वातावरण तथा सहपाठी मित्रवर्ग के संग से निर्मित होता है। विशेषकर सहपाठियों का जीवन और क्रियाकलाप उसे प्रभावित करते हैं। उसका सम्बन्ध घर की अपेक्षा व्यापक जगत् से अधिक हो जाता है। इस संघर्षकाल में योग अर्थात् परमात्मा की याद अति आवश्यक है। यही ईश्वरीय स्मृति का बल उसकी नैतिकता की रक्षा करता है।

जिस प्रकार चित्र में आप देख रहे हैं बच्चा स्कूल में पढ़ाई न पढ़, पिक्चर हॉल में जाना चाहता है और परीक्षा के समय परीक्षा का बहिष्कार करना चाहता है जबकि दूसरा बच्चा स्कूल के अतिरिक्त अपने घर में भी पढ़ाई करता है तथा कक्षा में प्रथम आने का लक्ष्य भी रखता है। निश्चय ही यह बच्चा बधाई का पात्र है। परन्तु उसके पिता एक ऐसे बच्चे ही महिमा कर रहे हैं जो परीक्षा में प्रथम स्थान पर आया है और जिसमें न क्रोध है न घमंड। निश्चय ही वह श्रेष्ठ है। योग के फलस्वरूप उनमें इतने सद्गुण हैं। बच्चे के मस्तिष्क में पवित्र विचारों को उत्पन्न करने के लिये योग बहुत लाभकारी है। योग से व्यक्ति की स्मरण शक्ति भी बढ़ती है और एकाग्रता भी आती है। साथ ही क्रोध के स्थान पर प्रेम और घमण्ड के स्थान पर नम्रता का गुण भी पनपता है। परमात्मा की याद से ही मन शान्त और सन्तुलित रह सकता है।

दूसरे चित्र में - शराब के नशे में चूर अपने बेटे के व्यवहार से परिवार के सदस्य परेशान हैं। ऐसा वातावरण सभी को अशान्त कर देता है। सभी दु:खों, क्लेषों तथा परेशानियों का मूल कारण अपने ही अन्दर के सद्गुण या दिव्य गुणों का अभाव है। यही अभाव व्यक्ति को अंधी गलियों में भटका देता है। आत्मिक ज्ञान का अभाव ही इसका मुख्य कारण है, जिसको आज शिक्षा में स्थान नहीं दिया जाता है। जब मनुष्य अपने अन्दर झांकने लगता है तो उसे अपनी बुराइयों पर काबू पाना आसान हो जाता है। मनुष्य स्वयं को पहचाने और यह मनन चिन्तन करे कि– ''मैं परमात्मा पिता की अमर संतान हूं, परमपिता परमात्मा सर्व महान् और सर्वशक्तिमान् है तो मैं कमजोर क्यों? मैं भी उनकी संतान होने के नाते शक्तिवान् हूँ... मैं दिव्य गुणों की धारणा से मनुष्य से देवता बनने वाली आत्मा हूँ... मैं अपनी कर्मेन्द्रियों पर राज्य करने वाला राजा हूँ...।'' इस प्रकार के यथार्थ और शुभ विचारों या चिंतन से दैहिक आकर्षण, जो कि दु:खों का मूल कारण है, समाप्त हो जाता है।

नीचे के चित्र में बच्चे वातावरण और संग-दोष में आकर स्कूल-कालेज की सम्पत्ति को हानि पहुँचा रहे हैं, जला रहे हैं। लेकिन इन वस्तुओं को तोड़ने व आग लगाने से कुछ प्राप्त नही होगा। वास्तव में, हमें इसी कुसंग व कुसंस्कार को तोड़ना है और एक परमात्मा के संग अपने मन का नाता जोड़ना है। जिस प्रकार लेन्स (lense) की सहायता से सूर्य की शक्ति कागज पर केन्द्रित होती है तो कागज जलने लगता है, उसी प्रकार परमात्मा की याद की शक्ति से हम अपनी बुराइयों को दग्ध कर सकते हैं। हमें अपने बुरे संस्कारों को जलाना अथवा मिटाना है न कि किसी की सम्पत्ति को।

विद्यार्थी कई बार समय व्यतीत करने या मनोरंजन के लिये सिनेमा देखने जाते हैं तथा अन्य मित्रों को भी साथ चलने के लिये आग्रह करते हैं। वास्तव में हरेक बच्चे के अन्दर इतनी क्षमता है कि वह समस्त सृष्टि रंग-मंच पर हीरो अथवा मुख्य अभिनेता बन सकता है। जिस प्रकार श्री नारायण, महात्मा बुद्ध, क्राईस्ट, शंकराचार्य, गुरुनानक आदि जितनी भी महान आत्माएं आईं, वे मानव के जीवन को नई दिशा दे गईं। उनमें एक अलौकिक मस्ती थी जिस पर अन्य कोई भी नशा नहीं चढ़ सकता था। हमें भी यह याद रखना चाहिये कि यह सृष्टि नाटक भी एक अनादि अविनाशी, मनोरंजक नाटक है जिसमें हम अपना श्रेष्ठ पार्ट कर सकते हैं।

अत: हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि हमारे जीवन में योग अर्थात् परमात्मा की याद अत्यावश्यक है।

यही योग की शिक्षा, शिक्षा-जगत् की समस्त समस्याओं का एक मात्र प्रभावशाली हल है।

नई शिक्षा-नीति में योग का स्थान

'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क' की उक्ति को ध्यान में रखकर नई शिक्षा नीति में स्वास्थ्य-सम्बन्धी शिक्षा को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है। स्वास्थ्य- शिक्षा में शरीर को स्वस्थ, निरोगी और स्फूर्ति-युक्त बनाने के लिए व्यायाम की आवश्यकता पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए योगासनों का भी अभ्यास कराया जाता है। योगासन भी तो एक प्रकार का व्यायाम ही है।

योग के विभिन्न आसन तथा योग की मुद्राएँ शरीर के विभिन्न अंगों, भागों व तन्त्रों से सम्बन्धित हैं। इन आसनों तथा मुद्राओं के ठीक व सुचारु रूप से अभ्यास द्वारा सम्बन्धित अंगों की स्थिति व कार्य-प्रणाली नियमित एवं स्वस्थ रूप से चलती है।

योगासन मुद्राएँ तथा प्राणायाम शारीरिक क्रियाओं तक ही सीमित हैं। विद्यार्थी इनके अभ्यास से शारीरिक लाभ तो लेते हैं लेकिन मानसिक एकाग्रता, अन्न की शुद्धि, विचारों की स्पष्टता, व्यवहार में सन्तुलन तथा तनाव-मुक्ति जैसी उपलब्धियों से वंचित रह जाते हैं क्योंकि ये उपलब्धियाँ विशेष रूप से सहज राजयोग के अभ्यास से ही प्राप्त होती हैं। सहज राजयोग द्वारा ही ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों पर नियंन्त्रण, जीवन में निश्चिन्तता तथा व्यवहार में सरलता, सौम्यता, मधुरता और कमल पुष्प के समान अलिप्तता आती है। चित्र के दूसरे स्तर पर यही उपलब्धियाँ राजयोग के अन्तर्गत दर्शाई गयी हैं।

शिक्षा में योग का स्थान तो नितान्त आवश्यक है लेकिन वह योग जिससे शारीरिक स्वास्थ्य के साथ मानसिक, बौद्धिक एवं आध्यात्मिक स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है वह सहज राजयोग कहलाता है। चित्र के केन्द्र में यही भाव दिखाया गया है।

सहज राजयोग ऐसा योग है जो न केवल शरीर से बल्कि आत्मा से और जीवन के व्यवहारिक पक्ष से भी सम्बन्ध रखता है। राजयोग द्वारा विद्यार्थी जब मन के विचारों को एकाग्र कर स्व एवं परमात्मा की ज्ञान-युक्त याद में स्थित होता है और अनुभूति द्वारा शक्ति प्राप्त करता है तो उसके जीवन में मानसिक एकाग्रता और व्यवहार शुद्धि सहज ही आ जाती है। उसके व्यवहार में मधुरता और उसके व्यक्तित्व में अनोखा निखार आ जाता है जो सभी को रूहानी रीति से प्रभावित करता है।

राजयोग के अभ्यास से चित्त शान्त एवं प्रफुल्लित रहता है। यही भाव चित्र में श्वेत पक्षी के रूप में व्यक्त किया गया है। योगी का चेहरा शान्ति व प्रेम की अलौकिक आभा से प्रकाशित रहता है। उसमें कार्यकुशलता, धैर्य एवं लगन के कारण सफलता उसका जन्मसिद्ध अधिकार बन जाती है। ऐसा व्यक्ति समाज का सहयोगी बनता है। चित्र में बाँयी ओर नीचे यही भाव अंकित किया गया है।

जिस प्रकार स्वच्छ जल में डूबते सूर्य का प्रतिबिम्ब और जल के अन्दर रही चट्टानें, मछलियाँ आदि स्पष्ट दिखाई देती हैं, उसी प्रकार राजयोग द्वारा विचारों की स्पष्टता का अनुभव होता है। सहज योग के अभ्यास से विचारों की स्पष्टता और दूसरों के भावों को समझने की शक्ति से महत्वपूर्ण निर्णय लेने की भी क्षमता का विकास होता है। यही भाव यहाँ जलाशय में सूर्य के आलोक के द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

कर्मेन्द्रियों और प्रकृति का अधिकारी योगी व्यक्ति कठिन परिस्थितियों, विघ्नों और बाधाओं में भी निश्चिन्त रहता है तथा उसकी अवस्था अचल, अडोल रहती है। शेष शैय्या पर सोये विष्णु, योगी की इसी अवस्था का प्रतीक हैं। परमात्मा की याद से सारे तूफान स्वत: ही शान्त हो जाते हैं।

इस प्रकार राजयोग जीवन के व्यवहारिक पक्ष की भी तालीम देता है। अत: योग को विस्तृत रूप से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तथा शिक्षा में महत्वपूर्ण स्थान देना चाहिए। जहां एक ओर यह सीखने में सहज है, वही

धारणा में भी सहज तथा उपलब्धि की दृष्टि से ऊंचा व अद्भुत है।

राजयोग का अर्थ

प्रत्येक कार्य में सफलता प्राप्त हो, उसके लिए एकाग्रता अनिवार्य है। कई विद्यार्थियों का चित्त चंचल रहता है। पढ़ाई में मन नहीं लगता और एकाग्रता प्राप्त नहीं होती। सहज राजयोग द्वारा एकाग्रता सहज ही उपलब्ध होती है। एकाग्रता के अतिरिक्त स्मरण शक्ति भी बढ़ती है और विद्यार्थी परीक्षा में उच्च स्तर प्राप्त करके पास होता है। जैसे सूर्य की किरणों को लेंस द्वारा एकत्रित करने से अग्नि की शक्ति पैदा होती है और वह कागज को जला देती है। वैसे ही राजयोग द्वारा ज्ञान-सूर्य परमात्मा में मन एकाग्र करने से मानसिक शक्ति प्राप्त होती है जिससे व्यर्थ संकल्प समाप्त हो जाते हैं और बुराइयाँ भी दग्ध हो जाती हैं। ऐसी अवस्था में दिव्य गुणों की धारणा सहज हो जाती है।

साधारणत: लोग 'योग' शब्द को शारीरिक आसनों या क्रियाओं का वाचक मानते रहे हैं। परन्तु जिस राजयोग की चर्चा हम कर रहे हैं, वह सहज योग है और सभी योगों में सर्वोत्तम भी है। 'योग' शब्द का अर्थ 'जोड़' है। राजयोग शब्द सभी योगों में सर्व महान् (राजा के समान) का वाचक है जिसमें आत्मा का सम्बन्ध परमात्मा से जोड़ा जाता है। इस सन्दर्भ में 'योग' शब्द 'परमात्मा की स्मृति' का पर्याय है। इसके अभ्यास के लिए, पहले स्वयं को इस भाव में स्थित करना है कि ''मैं आत्मा हूँ, मैं ज्योति-बिन्दु रूप हूँ भृकुटी के बीच चमकता हुआ एक सितारा हूँ। मैं ज्योति बिन्दु रूप परमात्मा पिता की अविनाशी सन्तान हूँ। मैं परमधाम की वासी हूँ। मैं शान्ति स्वरूप, पवित्र स्वरूप, प्रेम स्वरूप और आनन्द स्वरूप आत्मा हूँ। मैं शुद्ध, शक्ति स्वरूप और चैतन्य शक्ति आत्मा हूँ...।''

''...मैं सृष्टि मंच पर एक अभिनेता हूँ। परमधाम मुझ आत्मा का धाम है। मैं आत्मा इस शरीर द्वारा पार्ट कर रही हूँ। हम सभी आत्मायें परमपिता शिव की सन्तान हैं और आपस में भाई-भाई हैं। शान्ति मेरा स्वधर्म है, पिता परमात्मा शान्ति का सागर हैं। मैं शान्ति की लहरों में झूल रही हूँ...।'' ऐसा मनन- चिन्तन करते हुए मन और बुद्धि द्वारा परमधाम में पिता परमात्मा शिव से स्नेह युक्त मिलन मनाना ही 'राजयोग' है। इस प्रकार के मिलन से शान्ति और शक्ति की सहज ही अनुभूति होती है।

राजयोग के द्वारा संकल्पों पर नियन्त्रण हो जाता है। जैसे कोई साईकिल सवार सामने लाल बत्ती देखकर थोड़ी देर के लिए रुक जाता है, उसी प्रकार हमें भी दिन में तीन-चार बार तो कार्य-व्यवहार के बीच अन्तर्मुखी होकर व्यर्थ संकल्पों को कन्ट्रोल कर आत्म-चिन्तन व परमात्म-चिन्तन में थोड़ी देर स्थित होना ही चाहिए। जिस प्रकार भोजन से शरीर को शक्ति प्राप्त होती है। उसी प्रकार, आत्मा को शक्तिशाली बनाने के लिए ईश्वरीय ज्ञान रूपी 'आत्मिक भोजन' अत्यावश्यक है। भोजन भी परमात्मा की याद में धीरे-धीरे करना चाहिए।

यह शरीर एक प्रयोगशाला है और आत्मा वैज्ञानिक की तरह एक अनुसंधानकर्त्ता है। इस शरीर रूपी अद्भुत प्रयोगशाला में आत्मा वैज्ञानिक बन दिव्य बुद्धि का प्रयोग करती है। वैज्ञानिक प्रयोग में एकाग्रता प्राप्त करने के लिए राजयोग का अभ्यास अत्यन्त आवश्यक है।

सारांशत: प्रत्येक व्यवहार में, जीवन के हर पहलू में जो दिव्यता की सुगन्धि एवं सफलता का बल भरने वाला अभ्यास है, वह राजयोग है।

अध्ययन की नई दिशा

भारत की आध्यात्मिक संस्कृति, इसके जीवन-दर्शन, आचार-संहिता तथा संयम-नियम विश्व को एक अनमोल देन है। अनेक देश भारत की इस अद्भूत देन की ओर देख रहे हैं। परन्तु स्वयं भारतवासी ही अपनी इस महानतम् निधि को छोड़ बैठे हैं। अत: अब शिक्षा में इसका समावेश कर शिक्षा को नई दिशा देने की जरूरत है। जिस देश के लोग अपनी संस्कृति से कट जाते हैं मानों कि उनका मेल ही नहीं रहता। अत: आज इस संस्कृति का समावेश जरूरी है। भारतीय आध्यात्मिक संस्कृति का आधार है योग। योग का पाठ्यक्रम में समावेश ही शिक्षा को नई दिशा देना है जिससे कि देश और विश्व का भला हो।

योग भी अपनी तरह का एक विज्ञान है अथवा यूं कहें कि योग और विज्ञान का बहुत गहरा सम्बन्ध है और समानता है। विज्ञान बाह्य जगत के रहस्यों को खोज निकालता है और नूतन दिशाओं में अग्रसर होता है तो योग अन्तर्जगत के नये रहस्यों की गहराई में ले जाता है। जैसे टी.वी. ट्रांजिस्टर आदि पर जो प्रोग्राम रिले होते हैं उसे हमारे घर का एन्टीना पकड़ता है और टी.वी. में हम घर बैठे समाचार तथा अन्यान्य प्रोग्राम आसानी से देख व सुन सकते हैं। इससे स्पष्ट है कि प्रकम्पन (vibrations) दूर-दूर तक जाते हैं और सम्पर्क स्थापित करते हैं। इसी प्रकार विचार या चिन्तन के भी प्रकम्पन होते हैं। योगी उन द्वारा परमात्मा से सम्पर्क स्थापित करता, अर्थात् युक्त होता है।

विज्ञान की अपनी भाषा है, योग की अपनी। योग की भाषा आत्मिक स्नेह की भाषा है। वाणी और शब्दों की भाषा की अपनी सीमा है। उनका प्रभाव भी अलग प्रकार का है। स्नेह युक्त शब्दों का प्रभाव अलग होता है। कई बार मुख से जो नहीं कहा जा सकता वह नैन कह देते हैं। इसी प्रकार आंखों की भी अपनी सूक्ष्म भाषा है। संकेत और इशारे भी स्थूल भाषा की सीमा को तोड़ बहुत-कुछ कह जाते हैं। योग की भाषा मौन, नैन, शुभ भावना तथा स्नेह के प्रकम्पनों को मिला कर बनी हुई है।

हमारी वृत्ति व संकल्प भी प्रभावशाली भाषा का काम करते हैं। जैसे स्कूलों और कालेजों में विज्ञान, भाषा, गणित, इतिहास, भूगोल आदि मुख्य विषय होते हैं उसी प्रकार योग भी अपने प्रकार का एक विज्ञान है, यह एक भाषा है और इसका अपना गणित भी है। हमारी कल्याणकारी भावनायें हमारे खाते में 'प्लस (+) हो जाती अर्थात् जुड़ जाती हैं और अकल्याण की भावनायें 'ऋण' (-) हो जाती हैं। यदि हमारा कुल जोड़ १०० का है और कल्याणकारी भावना के ५ गुण है तो इस खाते का जोड़ १०५ हो जाता है। यदि ५ ऋण अर्थात् दुर्गुण हैं तो खाते में बाकी ९५ रह जाते हैं। पर यही कल्याणकारी भावना संकल्प से कर्म में आती है तो गुणा होकर अर्थात् १००X५=५०० हो जाती है। इसी प्रकार अकल्याण व दु:ख देने वाला संकल्प अगर कर्म में आता है तो भाग अर्थात् १००÷५=२० का खाता रह जाता है। कहने का भाव यह है कि कर्मों और गुणों का भी जोड़ और ऋण होता है और उसमें गुणा भी होता है और भाग भी। कर्मों का यह सूक्ष्म गणित भी तो पढ़ाया जाना चाहिए। यह गणित भी शिक्षा की एक नई दिशा ही होगी।

इसी प्रकार, इस सृष्टि का आध्यात्मिक दृष्टि से भी एक इतिहास अथवा इतिहास-दर्शन है। इसका एक अलौकिक 'भौगोलिक' या ब्रह्माण्ड सम्बन्धी ज्ञान भी है। इस आध्यात्मिक इतिहास ज्ञान तथा मांडलिक ज्ञान से भी जीवन में बहुत दिव्यता प्रकट होती है। इससे जीवन कमल पुष्प के समान बनता है और उसे एक नई दिशा मिलती है। इससे जीवन की पूर्णता और धन्यता से आत्मा अभिभूत हो जाती है। मनुष्य को तारामण्डल के पार के धाम का बोध होता है।

इस प्रकार विभिन्न विषयों के अध्ययन के साथ-साथ इस आध्यात्मिक ज्ञान अथवा नैतिक शिक्षा का अध्ययन ही, शिक्षा की नई दिशा है जो मानवता को पूर्णता, सम्पन्नता की ओर ले जाएगी।

सर्वोच्च शिक्षक

वास्तव में शिक्षक का कर्त्तव्य बहुत उत्तरदायित्व पूर्ण है और शिक्षक का स्थान भी बहुत ऊंचा है। शिक्षक समाज का निर्माता होता है परन्तु आज समाज में शिक्षक-शिक्षार्थी दोनों का स्थान पहले जैसा नहीं रहा। कई शिक्षक तो स्कूल और कालेज में पढ़ाने का कर्त्तव्य भी सच्चे मन से नहीं करते। कई तो विद्यार्थियों को कोचिंग प्राप्त करने का सुझाव देते हैं। इस प्रकार अब शिक्षा का सारा ढाँचा ही बदल गया है।

किसी काल में, भारत में तो शिक्षक भी बहुत ही महान् हुआ करते थे। स्कूलों और कालेजों में महान् शिक्षकों के अतिरिक्त भारत में विवेकानंद, राष्ट्रपिता गांधी, महर्षि अरविन्द आदि जैसे भी महान् शिक्षक हुए हैं जिन्होंने भूली-भटकी मानवता को, गुलामी और अन्धविश्वासों की श्रृंखला तोड़ने के लिए प्रेरित किया और एक नई रोशनी दी, उनका ध्यान महान् बनने के लिए मानवीय मूल्यों की ओर खिंचवाया और विश्व के इतिहास में व्यवहारिक जीवन की प्रयोगशाला में अनुसन्धान किया।

आज ऐसे महान् जन-शिक्षकों का लोग गुणगान करते हैं। उनसे भी और अधिक धर्म-स्थापकों ने शिक्षा-कार्य किया। उन्होंने अनेक देशों में जन-जन को अच्छा जीवन बनाने की शिक्षा दी। महात्मा बुद्ध, शंकराचार्य, इब्राहिम, ईसा, नानक ऐसे ही महान् शिक्षक हुए हैं।

इन सभी से भी पहले मानव जाति के आदि पिता अथवा आदि स्थापक प्रजापिता ब्रह्मा, जिन्हें कई धर्मानुवाई आदम या एडम नाम से याद करते हैं, हुए और सबसे बड़े शिक्षक तो ज्योतिस्वरूप परमात्मा ही हैं जिन्होंने ब्रह्मा या आदम को भी ज्ञान दिया और उन द्वारा दूसरों को भी दिया। उस परमपिता को 'शिव', गाड, अल्लाह, वाहगुरु इत्यादि कहा जाता है। उसी के द्वारा दी हुई शिक्षा से सभी का कल्याण आज फिर करने की अत्यन्त आवश्यकता है। वर्तमान पुरुषोत्तम संगम युग के समय स्वयं निराकार परमपिता परमात्मा शिव साकार माध्यम, प्रजापिता ब्रह्मा द्वारा सृष्टि के आदि-मध्य-अन्त, सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग, कलियुग तथा संगम युग अर्थात् पूरे कल्प के ५००० वर्ष का इतिहास फिर से सुना रहे हैं। वह सहज ज्ञान और सहज राजयोग द्वारा मनुष्य से देवता बनने की सर्वोच्च ईश्वरीय शिक्षा दे रहे हैं।

इस सर्वोच्च शिक्षा का सारांश यह है :-

१. देह और देह के धर्मों को भूल अपने को आत्मा समझो।

२. सर्व आत्माओं के पिता निराकार ज्योति-स्वरूप परमात्मा को याद करो।

३. आत्मा का सच्चा स्वधर्म पवित्रता, सुख एवं शान्ति है। इनकी प्राप्ति ही शिक्षा का मूल उद्देश्य है।

''मैं हूं शिक्षा''

शिक्षा का मूल उद्देश्य विद्यार्थियों का सर्वांगीण विकास करना है। अर्थात् अन्य गुणों का विकास करने के साथ-साथ उनको दिव्य कर्म करना सिखाना भी शिक्षा का उद्देश्य है। इसे ही विद्यार्थी का 'दिव्यीकरण करना' कहा जाता है। इसी प्रक्रिया से ही विद्यार्थी का जीवन सफल होता है।

भारत को हम भारत माता के रूप मे देखते व मानते हैं उसी प्रकार शिक्षा वा विद्या की देवी है-सरस्वती। शिक्षा के प्रत्येक संस्थान भले ही वे किसी भी धर्म परम्परा के हों विद्या देवी से विभिन्न नाम-रूपों से प्रेरणा अवश्य ही पाते हैं। क्या आज हर शिक्षा संस्थान की पावनता अथवा दिव्यता को बनाए रखने का सुप्रयास भी हो रहा है या नहीं? यह प्रयास हम कैसे करें? शिक्षा देवी के इस चित्र का हरेक भाग हमें उसके लिए मार्ग दर्शन देता है।

विद्या देवी का मस्तक और ललाट ज्ञान का प्रतीक है। श्रेष्ठ ज्ञान की धारणा से मस्तक उन्नत और अलौकिक होता है। उनकी दृष्टि, आत्मिक भ्रातृ भाव की और गुणग्राही का प्रतीक है। शिक्षा माँ है तो शिक्षार्थी उसके बच्चे, आपस में भाई-भाई हैं। यह बन्धुत्व की दृष्टि सभी को एक स्नेह के सूत्र में बाँध देती है। स्नेही भाई के अवगुण नहीं देखे जाते, न उसका वर्णन किया जाता, केवल उसके गुणों को ही देखा जाता है। दूसरेां के गुणों को देखते हुए हम भी गुणवान बन जाते हैं। विद्यादेवी के कर्ण धीरज और क्षमा के प्रतीक हैं। आज के विद्यार्थियों में क्षमा और धैर्यता का अभाव है। वह आवेश एवं जोश-जन्य उत्साह में कुछ भी कर सकता है। उसे हर बात और परिस्थिति में धैर्य और क्षमा से काम लेना है।

सरस्वती देवी का मुख विनम्र व्यक्तित्व का प्रतीक है। विद्या विनय से ही सुशोभित होती है। जैसे प्राणों पर ही जीवन टिका होता है, वैसे ही पवित्रता ही विद्या का प्राण है। विद्यार्थी जीवन पवित्रता और ब्रह्मचर्याश्रम पर टिका होना चाहिए।

सरस्वती जी के हाथ सामन्जस्य, तालमेल, सेवा, सत्कर्म के प्रतीक हैं। ज्ञान की धारणा, सेवा और सत्कर्म की ओर प्रेरित करती है। सेवा और सत्कर्म नहीं तो जीवन में सफलता भी नहीं। सरस्वती देवी के हाथों में वीणा है। वह जीवन का संगीत है। सेवा और सत्कर्म ही जीवन को संगीतमय बना देते हैं।

उनके वस्त्रों और आभूषणों में सादगी और दिव्यता है। आत्मा का श्रृंगार सादगी और दिव्यता को धारण करना ही आत्मा का श्रृंगार है।

उनके पांव उमंग और उत्साह के प्रतीक हैं। यदि जीवन में उमंग और उत्साह के पंख हैं, तो हम सदा दिव्यता के आकाश में उड़ते रहते हैं।

इस प्रकार शिक्षा की देवी विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास एवं दिव्यीकरण का महामन्त्र देती हैं जिससे विद्यार्थी गुणों एवं उमंग-उत्साह से सम्पन्न बनकर देश तथा समाज के प्रति अपनी रचनात्मक भूमिका निभा सकते हैं।

विद्यार्थी जीवन में समय का महत्व

समय की सही कीमत पहचानने वाला ही सफलता का सितारा बनता है। विद्यार्थी जीवन के गुजरते हर क्षण करोड़ों हीरों से भी अधिक मूल्यवान होते हैं, क्योंकि ये जीवन में सुख, शांति और सफलता प्रदान करने वाले होते हैं।

समय का मूल्य जानने वाला विद्यार्थी ही अपने जीवन में सदैव सफलता प्राप्त करता है। प्रस्तुत चित्र के ऊपरी भाग में दर्शाया गया है कि विद्यार्थी जीवन में समय, धन तथा तन की शक्तियों के महत्व को जानकर उनको अपने जीवन में सदुपयोग करने से सदा प्रगति के पथ पर बढ़ सकते हैं।

इन शक्तियों का उचित उपयोग करने से चिन्तन शक्ति को बढ़ावा मिलता है जिससे जीवन में नये-नये आविष्कार कर सकते हैं तथा उसके आधार से समाज अथवा देश का भला हो सकता है। इस रीति से विद्यार्थी अपनी बुद्धि को विकसित कर सकता है।

सदा प्रसन्न व हर्षितमुख वही विद्यार्थी रह सकता है जो कि अपना हर कार्य समय से पूर्व कर लेता है। इस जीवन में उमंग, उल्लास तभी ही आता है जबकि हम किसी भी कार्य को पूरा करने में समय की पाबंदी का ध्यान रखते हैं। समय पर कार्य सम्पन्न करने से एक प्रकार की आत्मिक सन्तुष्टि तथा खुशी का अनुभव होता है। हम अपने जीवन के अमूल्य क्षणों का विवेचन करके सदा शक्ति संचय कर सकते है तथा उत्तरोत्तर उन्नति प्राप्त कर सकते हैं। नियमित कार्य करने में ही सफलता निहित होती है।

समय के सदुपयोग से जहाँ एक तरफ युवा जीवन का सर्वांगीण विकास एवं उन्नति होती है वहीं दूसरी तरफ समय के दुरूपयोग से हमें अनेक प्रकार की कठिनाइयों एवं समस्याओं का भी सामना करना पड़ता है।

जैसे कोई विद्यार्थी अपने अध्ययन के अमूल्य समय को आलस्य एवं लापरवाही के कारण सोने में व्यतीत कर देता है तो इससे वह पढ़ाई में कितना कमज़ोर हो जाता है इसका अनुमान लगाना भी कठिन है। पढ़ाई के साथ-साथ उसका वह समय जो आलस्य तथा निंद्रा में बीत गया वह पुन: इस जीवन में वापिस नहीं आ सकता। जब वह अपना अध्ययन का कार्य समय पर पूरा नहीं कर पाता तो उसके मन में उसकी भविष्य की असफलता की चिन्ता उसको सदैव ही अशान्त किये रहती है।

विद्यार्थी जीवन में तो आलस्य का आना ही सफलता के दरवाजे को बन्द कर दु:खों के सैलाब को आमन्त्रण देना है। क्योंकि दुनिया में सब कुछ दुबारा मिल सकता है केवल बीता हुआ समय पुन: वापिस नहीं मिल सकता। अत: विद्यार्थी जीवन में समय का बड़ा महत्व है।

एक अनोखा ईश्वरीय विश्वविद्यालय

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय एक अद्भुत विश्वविद्यालय है। यह शिखर पर पहुँचता हुआ एक शैक्षणिक संस्थान है जो विश्वविख्यात तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त है।

इसकी शिक्षा विश्वभर में माननीय है। इस विश्वविद्यालय के केन्द्र ५ महाद्वीपों के अन्तर्गत ६६ से अधिक देशों में फैले हुए हैं, जिनकी संख्या इस समय ४५०० है, और जो एक गैर सरकारी संस्था के तौर पर संयुक्त राष्ट्र संघ के आर्थिक एवं सामाजिक परिषद का परामर्शक सदस्य है तथा यूनिसेफ (UNICEF) से भी सम्बद्ध है और जिसे संयुक्त राष्ट्र-संघ ने 'शान्ति पदक' तथा एक अन्तर्राष्ट्रीय और पाँच राष्ट्रीय 'शान्ति दूत' नामक पुरस्कार प्रदान किये हैं।

यह एक ऐसा विश्वविद्यालय है जहाँ मुख्य रूप से इन्सान को दिव्य गुणों से सजाने, उन्नति पर लाने, मानवता के गुणों – नम्रता, सहनशीलता, तर्कशीलता को उत्पन्न करने तथा सत्य की खोज पर बल दिया जाता है। इस विश्वविद्यालय की नीति और दार्शनिकता के अनुसार एक व्यक्ति जो आधुनिक समय में उच्च शिक्षित माना जाता है, लेकिन उसके अन्दर पक्षपात, विरोध, ईर्ष्या व घमंड पनपता है तो वह वास्तव में शिक्षित नहीं है। प्राचीन भारतीय शिक्षा की परिभाषा के अनुसार शिक्षा विनम्रता को पैदा करती है तथा विद्या पक्षपात, क्रोध तथा अन्य नकारात्मक संस्कारों से मुक्त करती है।

यह ईश्वरीय विश्वविद्यालय जीवन में सद्गुणों का विकास करता है, जिससे हम श्रेष्ठ जीवन बना सकते हैं, और उससे एक अच्छे जीवन का निर्माण किया जा सकता है। शिक्षा केवल धन्धा करने के लिए नहीं, बल्कि एक श्रेष्ठ जीवन के लिए ही है।

यह विश्वविद्यालय चरित्र-निर्माण को बहुत महत्व देता है और शान्ति बनाये रखने का सन्देश देता है। एक प्रसिद्ध लोकोक्ति है – ''चरित्र गया तो सब कुछ गया'' इस सन्दर्भ में यह विश्वविद्यालय विश्वास करता है कि अगर ''शान्ति गई तो जिन्दगी गई''। इसी को महत्व देते हुए यह विश्वविद्यालय ज्ञान और अनुभव से व्यक्ति को इतना योग्य बनाता है कि वह अपने जीवन में शान्ति की शक्ति को प्राप्त कर सके।

यह विश्वविद्यालय एक विशेष ढंग से उन विषयों पर शिक्षा देता है जो आज की समस्याओं और परिस्थितियों पर लागू होती हैं। इसकी शिक्षा के अणु धार्मिक हैं, यह नैतिकता, मनोविज्ञान, दार्शनिकता, प्राकृतिक विज्ञान का मिश्रण है तथा यहाँ पर इतिहास, सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक विषयों पर प्रकाश डाला जाता है। वास्तव में अन्य विषय दूसरे ज्ञान की शाखाओं जैसे प्राकृतिक विज्ञान से ही ग्रहण करना सिखाते हैं, परन्तु ईश्वरीय विश्वविद्यालय वह प्रणाली है जो कि बुद्धिमत्ता के आधार पर सभी विषयों को मिलाकर बनी है।

वर्तमान समय में अधिकतर समस्याएँ स्वयं की पहचान न होने के कारण हैं। स्वयं को न पहचानने की समस्या ही सब समस्याओं की जड़ है।

इस विश्वविद्यालय की पढ़ाई का लक्ष्य मौलिक प्रश्नों पर रोशनी डालता है, जिनका कुछ शब्दों में सारांश है - मैं कौन हूँ? मैं कहाँ से आया हूँ? मुझे कहाँ जाना है? यह शिक्षा इन प्रश्नों का एक तर्क-वितर्क के रूप में, वैज्ञानिक रूप में प्रायोगिक तरीके से उत्तर देती है।

यह मानना आश्चर्यजनक नहीं होगा कि विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने भी इस बात को स्वीकार किया है कि चेतना, मन या आत्मा के बारे में शिक्षा देना इसलिए आवश्यक है क्योंकि इससे हमारा हर प्रकार का विकास होता है।

यह वर्तमान समस्याओं के समाधान करने का एक नया हल है। इसकी सबसे मुख्य विशेषता है कि यह मुख्यत: माताओं-कन्याओं द्वारा चलाया जा रहा है, जिनके अन्दर समर्पण, त्याग, लगन, संयम की भावना है। इसके अन्दर किसी प्रकार की जाति-पांति, राष्ट्र, धर्म, मठ-पंथ का भेद-भाव नहीं। यहाँ न तो किसी प्रकार की

औपचारिकता है और न ही कोई शुल्क लिया जाता है।